ज्ञान तत्व 184,

(क) गायत्री परिवार द्वारा लिखे लोकस्वराज्य संबंधी विचार

(ख) ईश्वर दयाल जी द्वारा मृणाल पाण्डेय के लेख की समीक्षा और लोकस्वराज्य का समर्थन ।

(क) गांयत्री परिवार की कलम से

अगले दिनों चुनाव प्रकिया पूरी तरह बदलेगी

पंचायत राज्य ही विश्व– शासन का आधार बनाएगा

पंचायत की कल्पना मे भविष्य की स्वर्णिम आभा की झलक देखी जा सकती है। इक्कीसवीं सदी के भारत की शासन व्यवस्था के प्रायः सभी सूत्र इसमें संजोये है। पहले भी व्यवस्था के इसी स्वरूप और सूत्र को अपना कर भारतीय संस्कृति विशेषकर भारतीय राज्य व्यवस्था ने चक्रवर्ती होने का गौरव हासिल किया था। इसी रक्षा कवच के बलबूते हमारी राष्ट्रीय एकता और अखण्डता, सुदृढ़ता और सुव्यवस्था बनी रही।

इसी का उल्लेख करते हुए सुप्रसिद्ध इतिहासवेत्ता डा. राधा कुमुद मुखर्जी ने कहा है– '' स्थानीय स्वायत्त शासन के स्वतन्त्र विकास के फलस्वरूप देश को कछुए की खोल की तरह सुरक्षित , शान्ति का एक स्वर्णिम स्थान प्राप्त हुआ जहॉ राष्ट्र की संस्कृति उस समय अपनी सुरक्षा कर लेती थी जब देश के राजनैतिक गगन पर तूफान फूट पडता था। एक के बाद दूसरे विदेशी विजेता आ –आ कर अपना अधिपत्य जमाते रहे लेकिन यहॉ के ग्राम संध ज्वार भाटों से अप्रभावित रहने वाली समुद्री चट्टनों की तरह सर्वधा अप्रभावित रहे।

सही कहें तो पंचायत व्यवस्था न केवल शासन व्यवस्था के रूप मे बल्कि यहॉ की जीवन–पद्धति के रूप मे विकसित हुई थी। वैदिक काल मे तो गॉव से लेकर राष्ट्र तक ही नही अपितु समूचे विश्व भर की शासन व्यवस्था पंचायत प्रणाली पर आधारित थी। ऐतरेय ब्राह्मण मे इस तथ्य का उल्लेख करते हुए कहा गया है।

'' साम्राज्यं भोज्यं स्वराज्य वैराज्यं परमेष्टय राज्यं महाराज्यं आधिपत्तमय। समन्तपयायी स्यात्–सार्वभौमः सर्वायुधः आन्तादाराधात्। पृथिव्यं समुद्रं पर्यात्तया एक राष्ट इति। ''

और यही कारण था कि पंचायत की अवधारणा गॉव तक ही न सिमट कर जन राज्य तक चली गयी

'' इमं देवाऽअसपत्नथ्ंश्च सुवध्वं महते क्षत्राया महते–जान राज्याय।''

वैदिक साहित्य मे वैदिक काल के स्वर्णिम युग की खोज करने पर पता चलता है कि उस समय तक तो राजा शब्द का प्रचलन ही न हुआ था। समितिः आमन्त्रण और ग्राम सभा आदि शब्दों का ही प्रचलन दिखाई देता है। जो वेद मनीषियों के अनुसार पंचायत के ही पर्यायवाची

शब्द थे। रामायण काल मे पंचायत व्यवस्था भारतीय लोकतन्त्र की इकाई के रूप मे सुविकसित थी। इसी के माध्यम से ही गॉवों की स्वायत्तता, स्वावलम्बन एवं सत्ता का विकेन्द्रीकरण सम्भव बन पडता था। महाभारत मे जिस संध –राज्य का उल्लेख मिलता है उसमें गॉव से लेकर राष्ट्र तक की शासन व्यवस्था इसी पंचायत प्रणाली पर आधारित थी। थोडे बहुत हेर फेर के साथ यह व्यवस्था कौटिल्य काल तक चलती आयी।

आचार्य पाणिनि के समय मे घर से लेकर गणराज्य तक का प्रशासनिक ढॉचा पंचायती व्यवस्था पर ही आधारित था। हॉ इसके स्वरूप मे जरूर थोड़ा बहुत परिवर्तन हो गया था। उस समय पूरा गण और संघ आदि पंचायत के पर्यायवाची शब्दों के रूप मे प्रचलित थे। बौद्धकाल मे भी ग्राम सभा से लेकर गण राज्य की लोक तान्त्रिक व्यवस्था होने के पर्याप्त प्रमाण मिलते है। अकेले लिच्छवी गणराज्य मे 770 राज्य या गण राज्य होने का उल्लेख आता है। न सिर्फ प्रशासनिक बल्कि धार्मिक अनुष्ठानों मे पंचायत प्रणाली ही व्यावहारिक मानी जाती थी। तत्कालीन जैनसाहित्य मे अरायाणि गणरायनि दो एरव्यणि वैरज्जाणि एव विरूद्धरज्जाणि के नाम से जिन स्थानीय शासनों का उल्लेख मिलता है, वे विभिन्न प्रकार की पंचायतें ही थी। मौर्यकाल मे शासन व्यवस्था का राष्ट्रीय स्वरूप राज तान्त्रिक होने पर भी स्थानीय शासन प्रबन्ध पंचायतें के माध्यम से ही किया जाता था। मुगल काल मे भी ग्रामीण पंचायते बरकरार रहीं। हॉ ईस्ट इण्डिया कम्पनी की धुसपैठ के साथ ही इनके पतन की शुरूआत हुई। सुविख्यात मनीषी डॉ. अल्तेकर ने सही ही कहा है– '' अंग्रेज शासको ने ग्राम पंचायतों की इस प्राचीन परम्परा का ध्वंस कर हमारे देश के प्रति सर्वाधिक घातक कुकृत्य किया है।''

अॅग्रेजो की इस करनी के पीछे उनकी यह सोच थी कि भारत सांस्कृतिक दृष्टि से सर्वाधिक समृद्ध देश है और इसकी सांस्कृतिक जडे गॉवो मे है। जब तक इन्हे खोखला नही किया जाता इस देश को पूरी तरह गुलाम बना पाना सम्भव नही। इसी वजह से न केवल उन्होनें यहॉ के इतिहास को विकृत करने की कोशिशें की बल्कि पंचायत व्यवस्था को भी अपने घातक प्रहारों का निशाना बनाया। इस दृष्टि से भारत के इतिहास की व्याख्या विनोबा जी ने बहुत ही मौलिक ढंग से की हैं। इन्होने कहा है कि प्राचीन काल मे देश भी आजाद था और गॉव भी आजाद थे। जब अरब और मुगल आए तो देश गुलाम था किन्तु गॉव आजाद थे।? अॅग्रेजो के समय मे देश भी गुलाम था और गॉव भी गुलाम थे। अॅग्रेजो के जाने के बाद देश तो आजाद हो गया लेकिन गॉव गुलाम ही रह गये।

इस गुलामी से छुटकारा पाने के लिए विनोबा और महात्मा गॉधी दोनों ने ही पंचायतों को पुनर्जीवित और पुनर्गठित करने पर बल दिया था। लेकिन मूलभूत बात यह है कि उनके अनुसार पंचायत पद्धति के द्वारा ही केन्द्रीय एवं राज्य सरकार का गठन किया जायगा। बापू के शब्दो मे– ' आजादी नीचे से शुरू होनी चाहिये। हर गांव मे जम्हूरी सल्तनत या पंचायत का राज्य होगा। उनके पास पूरी सत्ता और ताकत होगी ऐसा समाज अनगिनत गॉवो को बनाना होगा। उसके पास फैलाव एक के उपर एक के ढंग पर नही, बल्कि लहरो की तरह एक के बाद एक की शक्ल मे नही होगा। जिन्दगी मीनार की शक्ल मे नही होगी जहॉ उपर की तंग चोटी के नीचे चौडे पाए को बडा होना पडता है। वहॉ तो समुद्र की लहरों की तरह जिन्दगी एक के बाद एक घेरे की शक्ल मे होगी और व्यक्ति उसका मध्य बिन्दु होगा जो हमेशा अपने गॉव की

खातिर मिटने के लिए तैयार रहेगा। '' गॉव अपने इर्द–गिर्द गॉवो के लिए मिटने के लिए तैयार रहेगा। ' गॉधी जी ने अपनी आखिरी वसीयत में भी कॉग्रेस संविधान को पंचायत पद्धति पर आधारित नियमों के अनुसार लोक सेवक संघ के स्वरूप में संगठित करने की अनुशंसा की थी। वे तो लोक सभा एवं विधान सभाओं का अप्रत्यक्ष निर्वाचन एवं गठन पंचायत पद्धति से ही चाहते थे ताकि वास्तविक लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण हो सके। अधिकाधिक स्वावलम्बन इसका आर्थिक और '' पंच बोले से परमेश्वर '' यानि सर्व सम्मति सर्वानुमति से चुनाव इसका सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक आधार है।

परमपूज्य गुरूदेव ने वर्तमान व्यवस्था पर असन्तोष व्यक्त करते हुए एक स्थान पर लिखा है–''शासन की असफलता का निवारण युग निर्माण आन्दोलन का मुख्य अंग है। अगले दिनों समाज व्यवस्था शासन–व्यवस्था को हम अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित एवं परिवर्तित करेंगे। समाज व्यवस्था के प्रयत्नो से जग जीवन इतना प्रबुद्ध हो सकेगा कि उसे कोई अपनी कुटिल चालों से बहका न सके। चुनाव मे पार्टी को नहीं व्यक्ति के जीवन स्तर की प्रामाणिकता को ही परखा एवं चुना जायगा। पार्टिया भी अब की तरह जातीय, क्षेत्रीय रूपों मे अपना अस्तित्व न रख पाऍगा चुनाव की प्रकिया मे भारी फेर बदल होगी। पंचायती राज्य ही अपना कमिक विकास विश्व शासन तक करेगा। ग्राम पंचायत मे चुने हुए लोग क्षेत्र पंचायत का, क्षेत्र पंचायत वाले जिला पंचायत का, जिला पंचायत वाले प्रान्त पंचायत का और प्रान्त पंचायत वाले राष्ट्रीय पंचायत का चुनाव करेंगे। यही कम अन्ततः विश्व शासन को जन्म देगा। इस प्रकिया से लाभ यह होगा कि अधिक उॅची पंचायत के लिए अधिक उत्तरदायी अधिक योग्य वोटर होगे और उनसे अधिक विवेकशीलता और जिम्मेदारी की आशा की जा सकती है।

आज पंचायत इसलिए प्राण हीन है, क्योकि उनके पास कुछ है ही नही। सरकारी अनुदानों की राहत पर चलने वाली इन पंचायतो से न तो लोक शक्ति निकल सकती है और न लोक योजनाऍ। पंचायत पर जो रिपोर्ट, प्रकाशित हुई है, उनमे यह साफ नजर आता है कि पंचायतें खुद के लिए कानूनों मे प्रदत्त टैक्स लगाने या वसूलने से हमेशा परहेज करती है और सरकार के अनुदानों की ओर टकटकी लगाकर देखती रहती है। इसलिये जब तक सरकार से मिलने वाले अनुदानो की आशा– सम्बल समाप्त नही हो जाएगी, हम स्थानीय पुरूषार्थ प्रकट होने की अपेक्षा नही कर सकते।

भारतीय संविधान के 73 वे संशोधन विधेयक मे गॉवो को स्वंय पूर्ण बनाने की बात विस्मृत कर दी गयी है। कुछ हजार रूपये उन्हे दे दिए जाऍगे यह कहना तो पुरूषार्थ– हीनता को बढावा देने वाली भिक्षावृत्ति है। दुर्भाग्य तो और हो जाता है,जब गॉव की योजना भी जिला एवं केन्द्र से आने वाली हो। जब पंचायत की अपनी योजना नही अपना राजस्व नही फिर स्वशासन कैसा राज्य एवं केन्द्र सरकारों की भिक्षा की और टकटकी लगाकर देखती रहने वाली पंचायतों मे तेजस्विता एवं लोक योजनाऍ नही पनप सकतीं।

समाज के विकास मे महत्वपूर्ण योगदान देने वाले आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना करना पंचायत का मुख्य मुद्दा होना चाहिए। लेकिन अभी तक इसमें विफलता ही मिली है। आर्थिक लोकतंत्र के साथ साथ सत्ता के लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की दृष्टि से भी पंचायतें सब से अधिक प्रभावशाली एवं शक्तिशाली इकाई नही बन सकीं जिन पर राज्य और केन्द्र निर्भर करें इसके विपरीत अभी तो पंचायतें लोक तांत्रिक सत्ता वृत के बाहर एक अत्यन्त कृत्रिम एवं एच्छिक

संस्था बनी हुई है। विधान सभाओं के हाथों पंचायत की तकदीर सौंप देने से पंचायत कभी पुरूषार्थ बन भी नही सकती। इसको जब तक केन्द्र या राज्य सरकार का अंग माना जाता रहेगा, तब तक पंचायतों की अस्मिता की रक्षा नही हो सकती। असल मे चाहे वे बलवन्त राय मेहता हो या समुदायिक विकास के अर्थ कर्ता धर्ता श्री एस के डे हों इन महारथियों ने पंचायतो को योगात्मक आर्थिक लोकतन्त्र के उपकरण बनाने के विषय मे कभी गम्भीरता पूर्वक विचार ही नही किया। यदि ऐसा किया गया होता तो अशोक मेहता कमेटी की पंचायतों को पर्याप्त संवैधानिक अधिकार दिए जाने की सिफारिश न करनी पडती। आर्थिक लोकतन्त्र के बिना पंचायतो के नाम से इस तरह के प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण का इसीलिए भीमराव अम्बेडकर ने अज्ञान, अंधविश्वास एवं गतिहीनता की संज्ञा दी थी।

जब तक नीचे से उपर तक की शासन व्यवस्था एक दूसरी से समुद्री लहरो की भॉति सम्बद्ध नही होगी, पंचायत को सच्ची प्रतिष्ठा मिलना असम्भव प्रायः है। यही नही स्थानीय स्वशासी निकार्यो तथा केन्द्रीय एवं राज्य सरकारो के बीच अधिकारों एवं अनुदानों के लिए खींचतान की स्थिति बनी रहेगी। इस समस्या का हल तभी सम्भव है, जबकि केन्द्रित राजनैतिक , आर्थिक,सामाजिक व्यवस्था को उलटकर विकेन्द्रित किया जाय। यह बात किसी तरह की समानान्तर व्यवस्था से सम्भव होती नजर नही आती। इसके लिए तो समूची चुनावी प्रकिया को भी पंचायती आधार देना होगा। अन्यथा पंचायतों को दी जाने वाली वर्तमान संवैधनिक संजीवनी भी उतनी कारगर न सिद्ध होगी। दरअसल वर्तमान संविधान द्वारा बनायी गयी दुहरी समाज व्यवस्था मे जहॉ नागरिकों को आजीविका का मौलिक अधिकार है और न जमीन जोतने वालों को जमीन का अधिकार है। वहॉ सच्चा लोकतन्त्र विकसित हो पाना सम्भव नही। फिर वहॉ जन योजना जन तन्त्र जन समाज की बात सोचना भी दिवा स्वप्न देखने के सदृश है।

इसीलिये भारत के सांस्कृतिक जीवन मे 'पंचायती व्यवस्था' को अति महत्वपूर्ण स्थान दिया गया था। गॉधीजी की ग्राम स्वराज्य की कल्पना विनोबा जी की ग्रामदान की सोच इसी की पर्याय रही है । इस प्रकिया मे नीचे स्तर से ग्राम विकास के लिए काफी गुॅजाइश रहती है। सारा गॉव एक परिवार का रूप ले लेता है । पारम्परिक पंचायत प्रणाली मे ' निर्णय प्रकिया की भी एक खसियत रही है कि यहॉ बहुमत या अल्पमत के आधार पर कोई निर्णय नही किया जाता। गॉव के लोगो द्वारा चुने हुए पॉच लोगो की सभा ही सर्व सम्मति से निर्णय करती है।

गोस्वामी तुलसीदास ने भी रामचरित मे इस बात को बार बार कहा है–

जो पंचहि मत लागै नीका।
करहु हर्षि हिय रामहि टीका।।
मोरि बात सब विधिहि बनाई।
प्रजा पॉच कत करहु सहाई।।

जबकि वर्तमान संसदीय प्रणाली बहुमत एवं अल्पमत के कारण विरोधी की राजनीति बन कर रह गयी है। विरोध के इसी जहर ने विकेन्द्रीकृत होकर ग्रामीण जीवन को भी पंगु कर दिया है और आज गॉव एक परिवार के रूप मे नही टुकडे और पंचायतें राजनीतिज्ञों की दूसरे दर्जे की टीम के खिलाडियों का खेल बनकर रह गयी है।

इसका समाधान सर्वसम्मति आम राय या सर्वानुमति की ही प्रणाली मे सम्भव है। हर देश

की अपनी परम्परा होती है । हर संस्कृति का अपना स्वर होता है। भारत की संस्कृति का स्वर समन्वय है। यही कारण है कि पंचायत प्रणाली मे भी पंच परमेश्वर यानि कि आमराय द्वारा निर्णय प्रकिया पर जोर दिया गया है । सदा सर्वगत सर्वहित ही पंचायत का बीज मंत्र है। यही वह प्रकिया है जिसकी शुरूआत आज भले छोटी दिखे, परन्तु अपने विस्तार मे यह धरती पर स्वर्ग के अवतरण का दृश्य उपस्थित करेगी। वर्तमान मे किए गए पंचायत राज की कोशिशें इक्कीसवीं सदी मे अपना ऐसा कुछ विकसित रूप उपस्थित करेगी जब गांव से राष्ट्र तक के प्रशासकों का निर्वाचन प्रजातन्त्र जन के द्वारा किया जायगा। वैदिक पंचायतो के समय मे भी निर्वाचन बहुमत के द्वारा किया जायगा। वैदिक पंचायतों के समय मे भी निर्वाचन बहुमत के द्वारा नही सर्वमत के द्वारा ही किया जाता था। इस प्रकार विरोध का विष फैलने के अवसर ही नही थे। अथर्व वेद मे कहा भी गया है–

सर्वास्त्वा राजन् प्रदिशो
हयन्तूपसद्यो नमस्यो मवेह।
त्वां विशो वृणतां राज्याय
त्वामिमाःप्रदिशःपंचदेवी।।

अर्थात– हे लोकनायक समस्त दिशाएँ तथा उपदिशाएँ आपको पुकारें। आप अपने क्षेत्र मे सबके लिए वन्दनीय बनें। हे तेजस्विन। ये प्रजाएँ आपको शासन का संचालन करने के लिए स्वीकार करें तथा पॉचो दिशाओ के पंच आपके मत से हो।

आज की पंचायती कल्पना कल इसी रूप मे साकार दिखेगी। विरोध का स्थान आम राय लेगी। अकेली सत्ता ही गॉव मे नही आएगी, बल्कि गॉवो का पराक्रम पुरूषार्थ भी जायेगा और प्राचीन भारत की वैदिक संस्कृति फिर से अपना खोया गौरव प्राप्त करेगी।

उपरोक्त लेख हमें जी.पी. गुप्ता छतरपुर वालों ने इस सम्बन्ध मे गायत्री परिवार की सोच सम्बन्धी जानकारी के लिये भेजा है। गुप्ता जी स्वंय भी गायत्री परिवार से जुडे हुए है।

मै मानता हूँ कि गायत्री परिवार की पत्रिका मे छपा यह लेख अत्यन्त महत्वपूर्ण है और पूरी तरह हमारी लोक स्वराज्य की अवधारणा के अनुकूल है किन्तु विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या गायत्री परिवार इस दिशा मे लेख लिखने के बाद भी सक्रिय है ? मुझे तो लगता है कि सक्रिय नही है। मै चाहता हूँ कि गायत्री परिवार इस दिशा मे पहल करे तो हम सब साथ मिलकर इस दिशा मे आगे बढ सकते है अन्यथा ज्ञान यज्ञ परिवार और लोक स्वराज्य अभियान ने इस दिशा मे एक सितम्बर से जो अभियान शुरू किया है उसमें गायत्री परिवार भी लगे । वर्तमान दूषित प्रणाली बदलनी चाहिये चाहे उसकी पहल गायत्री परिवार भी करे तो स्वागत योग्य है। आशा है कि गायत्री परिवार अपनी भूमिका पर विचार करेगा

बजरंग मुनि

(ख) लोक स्वराज्य है विकल्प

23 अगस्त 09 के दैनिक हिन्दुस्तान के मंथन स्तम्भ मे प्रकाशित सम्पादक मृणाल पाण्डेय का अग्रलेख बडे शहरो को बचाना क्यो जरूरी है मन को सच मुच मथने वाला है। विद्वान लेखिका ने महानगरीय सभ्यता को प्रगतिशील और ग्रामीण सभ्यता को प्रतिगामी बताते हुए महानगरीय सभ्यता को बचाने (और प्रकाशन्तर से ग्रमीण सभ्यता को समाप्त हो जाने या कर देने) की वकालत की है मृणाल पाण्डेय जैसे स्वस्थ और सुलझे विचारों वाली सम्पादक से तथ्यों और विश्लेषण के ऐसे भूल भरे भरमाने वाले आलेख की अपेक्षा तो नही ही थी। अन्ततः आलेख महानगरीय अभिजात्य मानसिकता को ही उजागर करता है।

सबसे पहले महानगरों और उनकी संस्कृति के जन्म और विकास को ही लें। लेखिका का कहना है 1947 से पहले अंग्रेजो ने भारत मे अपनी जरूरतों के तहत जाति और भाषा समूह विशेष के लोगो को नौकरियॉ देकर बडी बडी प्रेसिडेसियो मे बसाया । इससे कायम अलगाववाद और भेदभाव को आजादी के बाद क्षेत्रीय नेताओं ने अपने स्वार्थो के तहत बढाया। कुल मिलाकर आजादी के बाद के महानगर और बडे शहर हमारी सामाजिक राजनैतिक प्राथमिकताओ के दबावो से ही बने है। यदि लेखिका की उपरोक्त स्थापना सत्य हो तो प्रश्न उठता है कि संसार के अन्य शहरों पेचिंग टोकियो का विकास कैसे हुआ ? स्वयं भारत के बुद्धकालीन और बुद्ध पूर्व के और अंग्रेजो के आगमन के पूर्व के नगर और महानगर किन अंग्रेजो ने किन आवश्यकताओ के लिए बसाए थे ? सच तो यह है कि गॉवो द्वारा अतिरिक्त उत्पादन (सरप्लस प्रोडक्शन) से उनके विनिमय वितरण के लिए नगर पैदा होते है जो कालान्तर मे महानगर का रूप ले लेते है। इसी अतिरिक्त उत्पादन ने सैन्चव गांगेय सभ्यता के कालीबंगा हडप्पा मोहन जोदडो आदि पैदा किये और कलकत्ता बम्बई या लन्दन मास्को का विकास किया। यह प्रकिया बिल्कुल आर्थिक है इसमें अंग्रेजो और स्वार्थी राजनीतिज्ञो की भूमिका तलाश करने का कोई अर्थ नही है।

गॉवो के सरप्लस प्रोडक्टस (अतिरिक्त उत्पाद) से जन्मे विकसित हुए नगरों का अपनी श्रेष्ठता अभिजात्यता का गर्व बहुत कुछ वैसा ही है जैसे जल मे जन्मा बढा कमल अपने को जल से भिन्न श्रेष्ठतर मानता हो पर ऐसा करते समय यह भूल जाता है कि उसकी जडे जल मे ही बल्कि कीचड मे गडी होती है । उस से अलग होते ही कमल के भाग्य मे मुरझाना ही शेष रह जाता है । गावो को हिकारत की दृष्टि से देखने वाले नगरो महानगरो को किसी मुगालते मे नही रहना चाहिए। यदि गांव निः शेष्य हो गये तो नगर भी नही बच पायेगें। उन्हे मोहन जोदडो हडप्पा कालीबंगा की नियती भोगने के लिए तैयार रहना चाहिए । इतिहास प्रायः अपने को दुहराता रहता है।

ओनर किलिंग, सम्प्रदायिक हिंसा और कन्या भ्रूण हत्याओं के आधार पर लेखिका ने ग्रामीण परिवेश को प्रतिगामी कहा है देखा जाये तो इस तरह की हिंसा गॉव और शहरो की मुखापेक्षी नही है वे प्रवृति सोच और परिवेश की मुखापेक्षी है आनर किलिंग कलकत्ते में रिजवानुल की भी जान ले सकती है और हरियाणा के किसी गांव मे किसी युवा की भी। साम्प्रदायिक हिंसा के जो वीमत्स रूप कलकत्ते अहमदाबाद दिल्ली भागलपुर के नगरों महानगरो मे देखने को मिले है बुम्बई और पुणे में महाराष्ट्र नव निर्माण सेना की हिंसा ने जो जकड बंदी और संकीर्णता का रूप दिखाया है तथा वहॉ का प्रशासन और आम नागरिक मुक द्रष्टा बना रहा है वैसा तो गांव की कल्पना में भी नहीं आ सकता। फिर आनर किलिग और साम्प्रदायिक हिंसा

मे तो उत्तेजना के भी कुछ तत्व रहते है पर नगर निवासी पूर्व सांसद महोदय तो बिना किसी झगडे उत्तेजना के एकदम ठंण्डे दिमाग से अपने विश्वस्त मित्र और सहयोगी को अपने घर बुलवा कर अपने समाने ही अपने बेटे से हत्या करवा कर लाश गंगा में प्रवाहित करवा देंते हैं सचमुच महानगरीय सभ्यता प्रगतिशील है। पूर्व सांसद महोदय ने मृतक के उद्धार का पूरा पूरा ध्यान रखा । यदि कोई इस हिंसा को अपवाद मानने की हिमाकत करता है तो आंकडों से सिद्ध है कि ग्रामीण हिंसा की तुलना में नगरीय हिंसा के आंकडे दुगने हैं । यदि आंकडो की विश्वसनीयता पर सन्देह किया जाय तो उसकी भी जिम्मेवारी नगरों पर ही जायगी क्योंकि आंकडों का संग्रहण विश्लेषण के सारे उपक्रम वहीं है।

देंश के दो समृद्वतम राज्यों गुजरात और हरियाणा के खास पंचायतों तथा साम्प्रदायिक दलों के विस्मयकारी रूप से हिंसक और गैर कानूनी फरमान और कन्याओं की भ्रूण हत्या को ग्रामीण शोषण के अनुत्पादक उपभोक्ता वादी और प्रतिगामी होने के प्रमाण स्वरूप पेश करने वाली लेखिका इस तथ्य से ऑखे चुरा लेती है कि इन राज्यों की समृद्धि उन्ही शैतानी ताकतों की उपज है जिनके विनाश की गति तेज करने के लिए आन्दोलन की मांग को एक भावुक और आत्म धाती तेवर कहकर नकार देना चाहती है। आखिर बिहार या झारखण्ड जैसे आर्थिक दृष्टि से अपेक्षाकृत पिछडे राज्यों में कन्या भ्रुण हत्या और ऑनर किलिग के वारदात तथा हिंसक फरमानों के मामले क्यों नहीं देखे जाते ?

गांव के प्रेमी युगल द्वारा खाप से त्रस्त होकर शहरी थानों में ही गुहार लगाने को शहरी प्रगतिशीलता के प्रमाण स्वरूप पेश करती लेखिका इस बिन्दु पर मौन साध लेती है कि गांव के दम्पति प्रसव पूर्व लिंग परीक्षण और कन्या भ्रूण हत्याओं के लिए कहॉ जाते हैं ? अरे भाई जब थाने प्रसव पूर्व लिंग परीक्षण केन्द्र भ्रूण हत्या केन्द्र शहरों में ही है तो गरज के बाबले लोग वही जायेगे।

फिर प्रसव पूर्व लिंग परीक्षण कन्या भ्रूण हत्या किडनी गुर्दा व्यापार जैसे कार्य व्यापार नगरों महानगरों के सुशिक्षित सुसंस्कृत डाक्टरों द्वारा पल्लवित पुष्पित किये गये और अपने व्यापार को बढाने के लिए उन्होंने ही सोदेश्य इन्हे गांवो मे संक्रमित किया। आज भी ऐसे सारे केन्द्र नगरों महानगरों में ही केन्द्रित है जहॉ गरज के बाबलो को फंसा कर गर्दन पर भी और जेब पर भी छुरी फेरी जाती है। और फेरने वाले होते है खूब पढे लिखे दक्ष कहे जाने वाले सर्जन । हैरत की बात है कि छूरी फेरने वाले तो प्रगति शील कहे जा रहे है और शिकार प्रतिगामी पता नही यह कौन सी पत्रकारिता है ?

जिस शहरी सभ्यता को लेखिका बडी फराख दिल्ली से प्रगतिशील के खिताब से नवाज रही है उसकी रानी दिल्ली के हृदय स्थल मे तीन साढे तीन सौ लोगों जिनमे उच्च प्रशासनिक पुलिस पदाधिकारी पत्रकार और बुद्धि जीवी शामिल थे के सामने एक युवती की हत्या होती है और संवेदनहिनता की हद है कि अदालत को सच बताने के लिए एक भी गवाह नही मिलता जबकि एक चिंकारा शिकार मामले मे अशिक्षित कहे जाने वाले ग्रामीण सभी तरह की धमकियो और प्रलोभनो को ठुकरा कर अदालत को सच बताते है जहॉ तक मुझे याद आता है स्वयं लेखिका ने भी कभी इस बिन्दु को रेखांकित किया था तब भी नगर प्रगतिशील है और गांव प्रतिगामी गांवो के पंचायती निकायों मे रहेगा जैसी सरकारी योजनाओ के मार्फत उपजे भ्रष्टाचार

के नए स्वरूपो में दर्शन करते समय सुश्री लेखिका भूल जाती हे कि उसका उत्स भी महानगरो मे ही है और वे नगरो कस्बो से होती हुई निचले स्तर तक पहुॅचती है पंचायती निकायों को भ्रष्ट बनाने वाले और उन्हे संरक्षित प्रोत्साहित करने वाले महाभ्रष्ट राजनेता और नौकरशाह नगरो मे कम महानगरो मे ज्यादा विराजते है योजनाओ की अधिकांश राशि तो किसी न किसी बहाने किसी न किसी रूप महानगरो मे ही अटकी रह जाती है मात्र 15–20 प्रतिशत में से ही पंचायती निकायों मे बंदर बॉट होती है । फिर पंचायती निकायो के भ्रष्टाचार से निकली राशि इतनी छोटी होती है कि वे गांवो से निकल कर ज्यादा से ज्यादा नगरो तक जा पाती है पर नगरों महानगरों के भ्रष्टाचार से अर्जित राशिता सीधे स्वीटजर लैंड जैसे सुरक्षित जगहों मे पलयित हो जाती है । अब दोनो तरह के भ्रष्टाचारो मे कौन श्लाध है इसका निर्णय तो सुश्री पाठक ही करेगें।

नेशनल कांउसिल फॉर अप्लाइड इकालानिक रिसर्च के सर्वेक्षण ऑकडे देकर शहरी आबादी और आय का गुणगान करते समय लेखिका यह भूल जाती है कि यही ऑकडे शहरो के खुंखार शोषक चेहरे को बेन्नकाब करते है और यह कि शहरो का यह सारा ताम झाम गॉवो के अमानवीय शोषण और हकमारी का नतीजा है

देश की कुल कमाई का तीस प्रतिशत पैदा करने का दावा करने वाले दस महानगर इस सच्चाई पर पर्दा डालते है कि उस कमाई का अधिकांश भाग गांवो मे विभिन्न उत्पादो के रूप मे पैदा होते है केवल उनके विनिय वितरण का लेखा जोखा रखकर महानगर उन्हे अपनी कमाई धोषित कर देते है ं उदाहरणार्थ कोयला लोहा अवरख निकाले तो जाते है झारखण्ड के गांवो मे स्थित खदानो से ग्रामीण श्रमिको द्वारा पर उनके विनियम वितरण का लेखा जोखा रखा जाता है । खदान वाले गांव की आय शून्य मान ली जाती है । यह तो अंधेर गर्दी की हद है । इस खुले सघ्य पर पर्दा डालकर लेखिका पता नही पत्रकारिता के कौन से मानदण्ड स्थापित कर रही है।

देश मे खर्च की जाने वाली राशि के इक्कीस प्रतिशत का 10 महानगरों से निकलने का दावा भी शत प्रतिशत खोखला है। इस इक्कीस प्रतिशत मे ग्रामीण उपभोक्ताओं की जेब से निकलने वाली राशि भी सम्मिलित है । पूर्व के उदाहरण की भॉति उक्त खर्च का केवल लेखा जोखा महानगरो मे रखा जाता है वस्तुतः खर्च तो ग्रामीण उपभोक्ता करते है पर उसे शून्य मान लिया जाता है इस तरह महाराज गांवो के माल आय पर मिर्जा जी महानगर होली खेलने का करिश्मा संभव कर पा रहे हैं।

ग्रामीण युवाओ के लगातार शहरों की ओर पलायन से देश की आबादी का अनुपात शहरो और गांवो मे आधा आधा बंटने के करीब पहुॅचने से अति हर्षित लेखिका शहरो की ढॉचागत और प्रशासनिक बेहतरी के लिए सरकारो को जरूरी पूंजी का वन्दोवस्त करने की सलाह देते हुए जरा भीग्लानी का अनुभव नही करती और इस जमीनी सच्चाई को भूल जाती है कि चाहे जितनी भी पूंजी लगाई जाये सरकारे जितना भी जोर लगा ले भारत के नगर महानगर बढती जनसख्या के दबाव झेल पाने मे असमर्थ होकर टूटने विखरने को अभिसप्त होंगे और सरकारो के मुखिया श्री मति शीला दिक्षित की शैली मे इस टूटन और विखराब के लिए बिहार उत्तर प्रदेश के जनसंख्या पलायन को कोस कर अपना गुब्बारा निकालेगे। गावो से निराश होकर

जल्द से जल्द शहरो की ओर भागने की ग्रमीण युवाओं की प्रवृति से उत्साहित लेखिका इसके कारणों की पडताल से साफ कतरा जाती है । सच्चाई यह है कि नगरो महानगरो ने गांवो का इस बुरी तरह शोषण दोहन किया है कि गांवो की रोजगार देने की क्षमता निरंतर झीजती चली गई है। पेट की अनवरत जलने वाली ज्वाला ग्रामीण युवाओं श्रमिकों को नगरों महानगरों की ओर ढकेलती है जहॉ वे अमानवीय हिकारत भरी स्थितियो मे जीवित रहने को बाध्य होते है । हिबरे बाजार अहमदनगर महाराष्ट चित्रकुट उ.प्र. और वैशाली बिहार के उदाहरण इस बात के पुख्ता प्रमाण है कि यदि गावों मे रोजगार देने की पुरानी क्षमता संभावनाओ को पुनः पैदा किया जा सके तो मुम्बई दिल्ली जैसे महानगरो से प्रत्यावर्तित होकर ग्रामीण युवा और श्रमिक अपने गॉवो मे ही रहना पसन्द करते हैं । इससे नगरों महानगरों पर जनसंख्या का दबाव कम होगा और उनका टूटन विखराव रूकेगा।

गांवो के युवाओ का ग्रामीण विकल्पों से मोह भंग होने का मिथक मिथ्या है क्यों कि अभी उनके सामने ग्रामीण विकल्प रखे ही कहॉ गये है ? देयर इज नो अल्टरनेरिव कोई विकल्प नहीं कीतर्ज पर अभी तो उनके सामने एक मात्र विकल्प है इक्कीसवी सदी के सूचना राजपथ और अन्तराष्ट्रीय आर्थिक तंत्र से जुडे बडे शहर और वे उसी ओर वेतहाशा भाग रहे हैं। जहॉ उनके सामने समुचित विकल्प रखे गये हैं महाराष्ट्र को हिबरे बाजार या बंगलोर से 100 किलो मीटर दूर के गांव वहॉ महानगरों से गांव वापिस लौटने की उत्साहवर्धक धटनाए भी धटित हो रही है।

नगरों महानगरों को ग्रामीण व्यवस्था को अवांछनीय मान हिकारत से देखने के स्थान पर उसके सकारात्मक पक्ष को स्वीकार करना चाहिए। आदर्श स्थिति तो नगर ग्राम की युगल बंदी सह अस्तित्व से ही संभव है

हमारे जैसे चन्द्र सिरफिरों के तोड फोड से भयभीत लेखिका को जिस सौ साल पहले के अंधेरिया मोड का भय सता रहा है मेरी सलाह है कि वे उससे भी अगले मोड पर भी बढ कर देख लें अंग्रेजो द्वारा तोड फोड कर ग्रामीण उधोग धंधो को नष्ट कर देने से पूर्व जब हर ग्राम गणराज्य आत्मनिर्भर स्वतंत्र और समरस थे। तत्कालीन महानगरों की उथल पुथल से मुक्त गांवो के कार्य व्यापार अपनी गति से सर्वानुमति से चला करते थे । इतिहास की पुनरावृति बेमानी होगी। पर इतिहास कम से सीखा तो जा ही सकता है । स्माल इज वेस्ट की कहावत आज भी मौजुद है ग्राम गणराज्य की विकेन्दिगत आर्थिक सामाजिक व्यवस्था ही लोकस्वराज्य के सच्चे प्रतिमान और सहभागी लोकतंत्र के सच्चे वाहक बन सकते हैं। हम चाहे कुछ भी कर ले तेज बारिश चक्का जाम और नए प्लु बढते प्रदूषण भी महानगरों की रफतार पर ब्रेक लगाते ही रहेगें। जन संख्या के दबाव और समाजिक राजनैतिक अपेक्षाओं को अकेन्द्रित लोकस्वराज्य आधारित ग्राम गणराज्य ही झेल सकते हैं। देयर इज नो अल्टरनेटिव कोई विकल्प नहीं।

प्रो. डा. ईश्वर दयाल
ग्राम मुजफरपुर राजगीर नालन्दा विहार